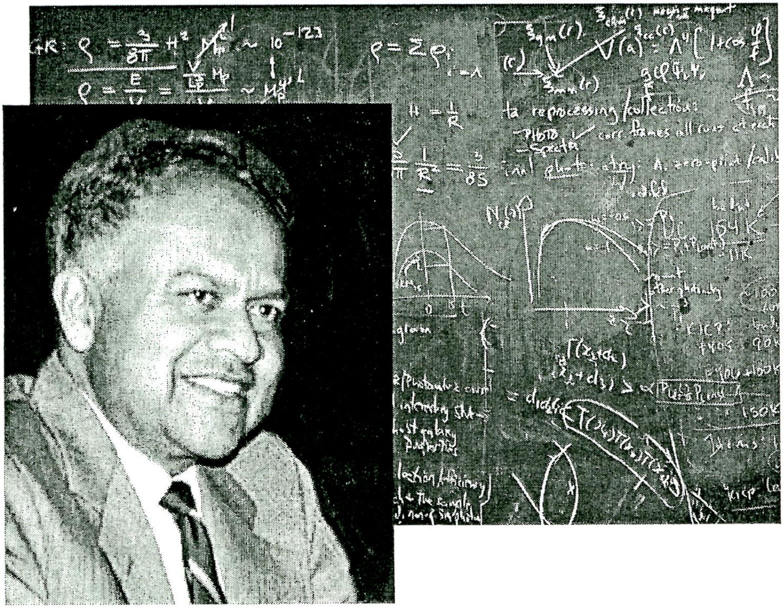

जयन्त नार्लिकर

विज्ञान, मैं - और विज्ञान का रोमांच

मेरे बचपन की पहली यादों में से एक उस समय की है जब मैं तीसरी कक्षा में पढ़ता था। एक दिन कक्षा अध्यापिका ने हमसे पूछा, "आपके पिताजी क्या करते हैं?" चूँकि यह स्कूल बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय के परिसर में स्थित था, हम में से अधिकतर छात्र इस विश्वविद्यालय के कर्मचारियों के बच्चे थे। अध्यापिका के प्रश्न के उत्तर में मैंने कहा, "मेरे पिताजी प्रोफेसर हैं।" फिर अध्यापिका ने पूछा, "किस विषय के प्रोफेसर?" यह तो मुझे पता ही नहीं था। तब अध्यापिका ने बताया, "तुम्हारे पिताजी गणित के प्रोफेसर हैं।" सही उत्तर न जानने की उदासी एकाएक हर्ष में परिवर्तित हो गई। तो

पिताजी मेरा सबसे प्रिय विषय पढ़ाते थे!

मैंने इस घटना का उल्लेख यह स्पष्ट करने के लिए किया कि मेरी गणित के प्रति रुचि स्वतः थी, परिवार के दबाव के कारण नहीं। कई बार जाने-अनजाने बच्चों पर अपने प्रतिभाशाली माता-पिता के पद्चिन्हों पर चलने का दबाव होता है।

गणित और विज्ञान की तरफ मेरा रुझान मेरे पिताजी ने जल्द ही भाँप लिया। मुझे प्रोत्साहित करने के लिए और मेरी जिज्ञासा बढ़ाने के लिए पिताजी गणित के मनोरंजक किस्से, पहेलियाँ और विरोधाभास (Paradoxes) मुझे बताते थे। गणित से जुड़ी कई रोचक पुस्तकें भी मुझे मिलती थीं। मेरे और मेरे भाई के लिए उन्होंने हमारे घर में रसायन शास्त्र की एक प्रयोगशाला भी बनाई। और साथ ही हमें प्रयोग करने के लिए प्रेरित भी किया।

उन दिनों श्री एन.आर. रामबिहारी, ए.सी. बेनर्जी एवं वैद्यनाथस्वामी जैसे महान गणितज्ञ जब बनारस आते तो अक्सर हमारे घर रुका करते थे। इन गणितज्ञों की बातें मेरी बाल-बुद्धि की समझ के बाहर थीं पर घर में ज्ञान के वातावरण का आभास अवश्य होता था।

रुचि की शुरुआत

मुझमें प्रतिस्पर्धा का भाव जागृत करने में मेरे मामा, श्री मोरेश्वर हुज़ूरबाज़ार की अहम भूमिका रही। तब मैं कक्षा आठवीं में पढ़ता था। मामाजी, जिन्हें मैं प्यार से मोरू मामा कहता था, एम.एससी. करने बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय आए और हमारे साथ रहने लगे। वे बहुत प्रतिभाशाली थे। और बॉम्बे विश्व-

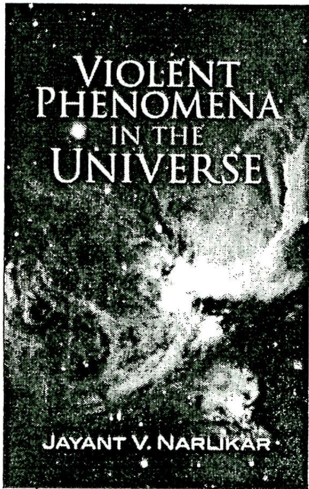

विद्यालय की बी.एससी. परीक्षा में उन्होंने बहुत अच्छा प्रदर्शन किया था (बाद में, वे इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस, मुम्बई में प्राध्यापक और उसके पश्चात् वहाँ के निदेशक भी रहे)।

मोरू मामा ने जल्दी ही यह जान लिया कि मुझे गणित में रुचि थी। घर में पिताजी ने हमारे मनोरंजन के लिए दो ब्लैक बोर्ड लगाए थे। मोरू मामा ने इन का एक अनोखा उपयोग निकाला। वे ब्लैक बोर्ड पर 'जे.वी.एन. के लिए चुनौतीपूर्ण सवाल' नाम से गणित

की कोई पहेली या जटिल प्रश्न मेरे लिए लिख छोड़ते। यह प्रश्न तब तक वहाँ रहता जब तक या तो मैं उसका हल नहीं खोज लेता या हार नहीं मान लेता (मैं गर्व के साथ कह सकता

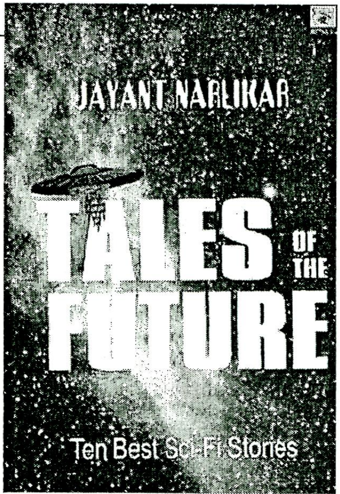

हूँ कि हार मानने की नौबत कभी-कभी ही आती थी)।

मोरू मामा के प्रश्न मेरे पाठ्यक्रम से परे थे। वे विश्लेषणात्मक तार्किकता और ट्रिक समाधान के सवाल देते थे जो गणित के किसी गुप्त पहलू को स्पष्ट करते थे। इस बात का मुझे आज तक खेद है कि उन अत्यन्त रोचक प्रश्नों और पहेलियों का कोई विवरण नहीं है। पर जहाँ तक मेरा सवाल है, मेरे अन्दर मुश्किल सवालों की चुनौती स्वीकार करने की प्रवृत्ति विकसित हुई।

मैं यहाँ अपने विद्यालय के उन अध्यापकों के प्रति भी कृतज्ञता प्रकट करना चाहूँगा जिन्होंने मेरे उत्साह को कम न होने दिया। कभी-कभी मोरू मामा द्वारा दिए गए सवालों को मैं स्कूल ले जाता था। श्री पाण्डे, मेरे गणित के अध्यापक, चाहे स्वयं उन सवालों को हल करने में सफल न भी होते तो भी वे उन पर कक्षा में चर्चा अवश्य करते। आजकल कितने ऐसे शिक्षक हैं जो पाठ्यक्रम के बोझ और बढ़ती विद्यार्थी जनसंख्या से जूझते हुए गणित की अनजानी गलियों में विचरण करने का साहस और धैर्य रखते हैं? मुझे याद है कि एक पूरा पीरियड, इस तथा-कथित कठिन सवाल को सिद्ध करने के वार्तालाप में बीत जाता था: "यदि एक त्रिभुज के आधार कोण के कोण-समद्विभाजक समान हैं तो यह एक समद्विबाहु त्रिभुज होगा।"

मैं एक और बात आपको बताना चाहूँगा। महान गणितज्ञों और वैज्ञानिकों की जीवनी और उनकी सृजनात्मक प्रतिभा पर लिखी गई पुस्तकों ने मुझे उनके संघर्ष से अवगत कराया। 'मैन ऑफ मैथेमेटिक्स,' 'दि वर्ल्ड ऑफ मैथेमेटिक्स,' 'लिविंग बायोग्राफीज़ ऑफ ग्रेट साइंटिस्ट्स' जैसी पुस्तकों ने मुझ पर गहरा असर डाला। एक ओर यह आभास हुआ कि प्रतिभाशाली और गुणी वैज्ञानिक भी अभिमान और अहंकार के शिकार हो सकते थे और आम इन्सान की तरह गलतियाँ भी

करते थे; पर दूसरी ओर यह अहसास भी हुआ कि विज्ञान अपनी त्रुटियों से सीखता हुआ, उन्हें सुधारता हुआ, सदैव सही उत्तर की खोज में अग्रसर रहता है। इसी अहसास ने मुझे भी विज्ञान की राह पर चलने के लिए प्रेरित किया।

मेरे निर्णय

मैंने गणित के लगाव के बारे में तो आपको बहुत कुछ बताया परन्तु मैं आपको यह भी बताना चाहूँगा कि मुझे भौतिक-विज्ञान भी बहुत प्रिय था। लेकिन भौतिक-विज्ञान का पाठ्यक्रम कतई रोचक नहीं था और भौतिकी में कुछ विशेष सवालों को छोड़कर प्रकृति के नियमों का रहस्य जानने का रोमांच मुझे गणित की तुलना में कम महसूस हुआ। फिर भी यह मेरा दूसरा प्रिय विषय रहा। और मेरा तीसरा प्रिय विषय था, संस्कृत।

संस्कृत भाषा में रुचि मेरी दिवंगत माता जी के कारण थी। उन्होंने मुझे कालीदास और भवभूति जैसे महान रचनाकारों की कला से अवगत कराया। और मोरू मामा ने संस्कृत में रचित साहित्यिक कृतियों से मेरा परिचय कराया।

काश कि हमारी विश्वविद्यालयीन व्यवस्था के अन्तर्गत एक विज्ञान का छात्र संस्कृत का अध्ययन भी कर सकता। परन्तु नहीं। दसवीं की परीक्षा के पश्चात् मुझे अपने विषयों का चुनाव करना था और संस्कृत मैं कला संकाय लेने पर ही पढ़ सकता था।

इंटरमीडियेट की विज्ञान की परीक्षा के बाद निर्णय की घड़ी आई। बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय में एक राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित इंजीनियरिंग कॉलेज है। इसमें दाखिला प्राप्त करना बेहद

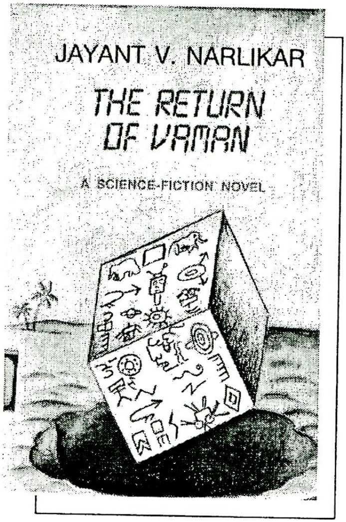

कठिन था। सबको उम्मीद थी कि मैं परीक्षा में अच्छा प्रदर्शन करूँगा और मेरे लिए इंजीनियरिंग एक अच्छा विकल्प होगा।

बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय के छात्र हर वर्ष एक प्रदर्शनी आयोजित करते थे जिसमें छात्रों द्वारा निर्मित उपकरणों को प्रदर्शित किया जाता था। मैं हर साल इस प्रदर्शनी को देखने जाता था, और इस विश्वविद्यालय के छात्रों के कौशल का आनन्द उठाता था। बारहवीं की

परीक्षा के बाद जब मैं वहाँ गया तो कई शिक्षकों ने उम्मीद जताई कि अगले साल वे मुझे इंजीनियरिंग कॉलेज में एक छात्र के रूप में देखेंगे।

हालाँकि, मेरे लिए निर्णय पहले ही हो चुका था। मेरे मन में गणित के

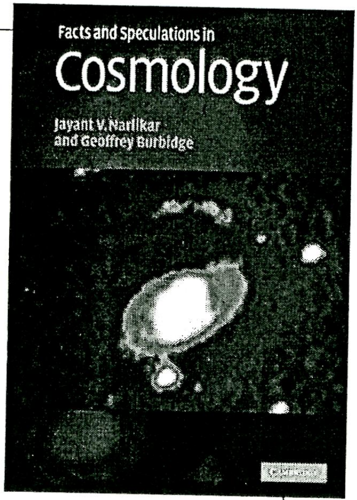

प्रति इतना लगाव पैदा हो चुका था कि इंजीनियरिंग चुनने का विचार मन में आया ही नहीं।

मुझे लगा कि गणित की उन समस्याओं से टक्कर लेना, जिनका हल किसी के पास न था, अत्यन्त रोमांचक होगा – कम-से-कम मोरू मामा के उन सवालों की तुलना में जिनके जवाब वे स्वयं तो जानते ही थे। मैंने अक्सर अपने पिता को गणित के जटिल सवालों का हल खोजते हुए देखा था। वे सफेद पन्नों पर लिखे लम्बे-लम्बे हिसाबों से घिरे, गणित की बारीकियों में खोए रहते।

मेरे शैक्षिक भविष्य का मार्ग मुझे कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय की गणितीय प्रावीण्य-परीक्षा की तरफ मोड़ रहा था जहाँ, मुझे लगता है कि हर किसी के साहस का वास्तविक परीक्षण होता है। बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय से बी.एससी. कर लेने के पश्चात् मैंने इस परीक्षा के ज़रिए कैम्ब्रिज में दाखिला लेने का निर्णय लिया। मेरे पिताजी जो स्वयं कैम्ब्रिज में अध्ययन कर चुके थे, मुझे प्रोत्साहित करते रहे।

कैम्ब्रिज तक का मार्ग

कैम्ब्रिज में दाखिला पाने में दो अड़चनें थीं। पहली, वहाँ दाखिला पाना अत्यन्त कठिन था। केवल बी.एससी. में अच्छा प्रदर्शन कर लेना ही काफी नहीं था क्योंकि 1950 के दौर में भारतीय विश्वविद्यालयों का शिक्षा स्तर अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों की तुलना में निम्न माना जाता था। और अगर दाखिला मिल भी जाए तो पैसों की समस्या।

सौभाग्य से मेरी मदद कई स्रोतों से हो गई। मेरे पिताजी की उपलब्धियों ने, मेरी बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय में प्रथम श्रेणी प्राप्ति पर विश्वसनीयता की मोहर लगा दी। इसके बावजूद कैम्ब्रिज ने मुझे सम्बद्ध स्टेटस देने से इन्कार कर दिया जिसके चलते मैं अपनी पढ़ाई तीन वर्ष की बजाय मात्र

दो वर्ष में पूरी कर सकता था। इस इन्कार का कारण था: बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय की बी.एससी. डिग्री को इस स्टेटस के लिए मान्यता प्राप्त नहीं थी, जो बॉम्बे विश्वविद्यालय की बी.एससी. को थी। अतः मुझे तीन वर्ष के लिए दाखिला लेना पड़ा।

धनराशि की समस्या प्रतिष्ठित जे.एन. टाटा छात्रवृत्ति मिलने पर हल हो गई। यहाँ पर भी मेरे पिताजी की उपलब्धियों ने मेरी मदद की। वे खुद भी इस छात्रवृत्ति को प्राप्त कर चुके थे। यानी मेरे पिताजी भी जे.एन. टाटा स्कॉलर थे। फिर भी इस छात्रवृत्ति के लिए मुझे एक कठिन साक्षात्कार से गुज़रना पड़ा। यद्यपि उन्होंने मुझे छात्रवृत्ति देने का निर्णय ले लिया, लेकिन, साथ ही एक चेतावनी भी दे डाली - आत्म-सन्तुष्टि त्याग कैम्ब्रिज में अथक प्रयास करने की सलाह दी। उनकी इस सलाह को मैंने अपने जीवन में ढाल लिया।

इस लेख के अन्त में मैं एक और विकल्प के बारे में बताना चाहूँगा। कैम्ब्रिज के वरिष्ठ एवं 1899 के प्रतिष्ठित भारतीय शिक्षक श्री आर.पी. परांजपे से मेरी भेंट हुई। उन्होंने मुझ से पूछा, "क्या गणितीय प्रावीण्य-परीक्षा के बाद तुम भारतीय प्रशासनिक सेवा में भर्ती होने वाले हो?" वे उस समय की आम प्रथा की बात कर रहे थे क्योंकि कैम्ब्रिज डिग्री के बाद आई.ए.एस. में भर्ती होना स्वाभाविक माना जाता था। उल्लेखनीय बात है कि जब श्री परांजपे ने कैम्ब्रिज में अपना कौशल दिखाया तो उनसे भी उम्मीद की गई थी कि वे आई.सी.एस. में भर्ती होंगे। परन्तु उन्होंने शिक्षक बनने का निर्णय लिया। उनके प्रश्न का उत्तर मैंने स्पष्ट शब्दों में इस प्रकार दिया, "नहीं श्रीमान, मैं शिक्षण और अनुसन्धान के मार्ग पर चलना चाहता हूँ।"

जयन्त नार्लिकर: प्रसिद्ध कॉस्मोलॉजिस्ट। फ्रेड हॉयल के साथ 'कनफॉर्मल ग्रेविटी थ्योरी' विकसित की जिसे 'हॉयल-नार्लिकर थ्योरी' के नाम से जाना जाता है। भटनागर पुरस्कार, एम.पी. बिड़ला पुरस्कार जैसे विज्ञान के अनेकों प्रतिष्ठित पुरस्कारों से सम्मानित। वैज्ञानिक शोध पत्रों और प्रचलित विज्ञान साहित्य के साथ-साथ नार्लिकर ने अँग्रेज़ी, हिन्दी और मराठी में अनेक उपन्यास, लघु कथाएँ एवं साइंस फिक्शन लिखे हैं। एनसीईआरटी की विज्ञान एवं गणित की पाठ्य पुस्तक निर्माण में सलाहकार हैं।
अँग्रेज़ी से अनुवाद: बिंदु गुर्टू: अँग्रेज़ी भाषा की प्रशिक्षक हैं और स्वतंत्र रूप से लेखन करती हैं। भोपाल में निवास।